साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत उर्दू काव्य-संग्रह

पिछले मौसम का फूल

मज़हर इमाम

H
819.100 8
M 457 P

H
819.100 8
M457P

अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की मां—रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं, इसे नीचे बैठा लिपिक लिपिबद्ध कर रहा है । भारत में लेखन-कला का सम्भवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख ।

नागार्जुन कोण्डा, दूसरी सदी ई.
सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली

साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत उर्दू काव्य-संग्रह

पिछले मौसम का फूल

(हिन्दी लिप्यंतरण)

मज़हर इमाम

साहित्य अकादेमी

Pichhle Mausam Ka Phool : Hindi transcription by Mazhar Imam of his Akademi's award winning Poetry collection '*Pichhle Mausam Ka Phool*' in Urdu, Sahitya Akademi, New Delhi (1999), Rs. 45.00

© साहित्य अकादेमी

प्रथम संस्करण : 1999

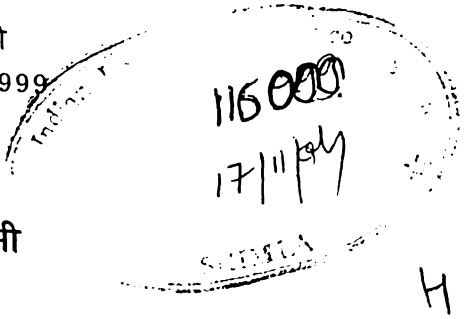

H
819.100 8
M457 P

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवीन्द्र भवन, 35, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली 110 001
विक्रय विभाग : स्वाति, मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय
172, मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग, दादर, मुम्बई 400 014
जीवनतारा बिल्डिंग, चौथी मंज़िल, 23 ए/44 एक्स.,
डायमंड हार्बर रोड, कलकत्ता 700 053
304-305, अन्ना सलाई, तेनामपेट, चेन्नई 600 018
109, ए.डी.ए. रंगमन्दिर, जे. सी. मार्ग, बंगलोर 560 002

ISBN 81-260-0399-5

मूल्य : पैंतालीस रुपये

Library IIAS, Shimla
H 819.100 8 M 457 P
00116000

शब्द संयोजक एवं मुद्रक : नागरी प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032

अनुक्रम

भूमिका : आले अहमद सुरूर 7

ग़ज़लों की पहली पंक्ति

तिरा ही बह्र, सफ़ीना रवाँ भी तेरा है 15
तू है गर मुझ से ख़फ़ा, खुद से ख़फ़ा हूँ मैं भी 16
काश! अब अपनी तमन्ना का खुदा हो जाऊँ 17
उसको ये ज़िद है कि रह जाए बदन सर न रहे 18
हरफ़े दिल ना रसा है तिरे शहर में 19
वही दश्ते बला है और मैं हूँ 20
अव क्या ये धुआँ-सा उठ रहा है 21
जागती आँखें लुटाती हैं ज़रो गौहर अभी 22
तिरे ख़याल का शोला थमा थमा-सा था 23
ये खेल भूल भुलय्याँ में हमने खेला भी 24
दुनिया का ये एज़ाज़, ये इनाम बहुत है 25
बुलन्द-बाम हवा का मकान कितना था 26
भरा हुआ तिरी यादों का जाम कितना था 27
ये तजर्बा भी करूँ, ये भी ग़म उठाऊँ मैं 28
ज़िन्दगी काविशे बातिल है, मिरा साथ न छोड़ 29
इक जब्र की हद में हो, उस हद से निकल जाओ 30
दिलों के रंग न मिलते हों, जव भी होता है 31
रौंदी हुई ज़मीं थी, नए रहगुज़र भी थे 32
दिल अकेला है बहुत लालए सहरा की तरह 33
मैं जानता हूँ वो नज़दीक व दूर मेरा था 34
टूटी हुई दीवार का साया तो नहीं हूँ? 35
आमादा रक़ाबत पे मिरा दिल ही नहीं था 36
हवा थी, रंग थी, खुश्बू थी, ख़्वाबे फ़र्दा थी 37
वो क़रीव आएगा, ऐसा न कभी सोचा था 38
न मुझमें ही शोला-ए-तलब था, न तुममें जोशे सपुर्दगी था 39

निगाहो दिल के पास ही, वो मेरा आशना रहे 40
फ़सूने हर्फ़ ले गया, तिलिस्मे ख़्वाब ले गया 41
न जाने दिल पे क्या गुज़री, मगर बाहर नहीं बदला 42
मैं अक्स-अक्स रंगे बहाराँ में खो गया 43
तुझे भी जाँचते, अपना भी इम्तहाँ करते 44
ख़्वाहिशे सूद नहीं है तो ज़याँ भी कम है 45
उससे न जब मिले तो ज़माने से कब मिले 46
चाँद शाख़ों की मीना से ढलता हुआ 47
मज़ा लम्स का बेज़बानी में था 48
तारों से भरी राहगुज़र ले के गई है 49
कोई बेचैन अदा रहने दो 50
वो अपने ग़म से ही छूटा न होगा 51
बे आब आईने थे शजर बे लिबास थे 52
हर एक शख़्स का चेहरा उदास लगता है 53
बे मिन्नते चराग़, ज़रा दूर तक चलें 54
दिलों के रंग अजब, रावता है कितनी देर 55
मौसम के वदलने का कुछ अंदाज़ा भी होता 56
ये सरावे जिस्म व जाँ ही तो उठा ले जाएगी 57
तुमने शवे हिज्राँ की मुझको जो दुआ दी है 58
उसे हाल से बाख़बर कीजिए 59
ज़लज़ले सब दिल के अन्दर हो गए 60
हर खरा इस कसौटी पे खोटा हुआ 61
तौल मुझको, मुझे मीज़ान में रख 62
फिर शह्र में आए हैं सितमगर तो हमें क्या 63
शुक्रिया तेरा, कि ग़म का हौसला रहने दिया 64
ज़ख़्मे ताज़ा क्या दिखाऊँ जब मसीहाई न हो 65
वो मेहमान मिरा, मेज़बान किसका है 66
पसे गुबारे तलब रात ढलती रहती है 67
ज़िन्दगी भूल गई अपना पता, लौट चलें 68
हाथ उठते ही कटा, चलिए, यहाँ से चलिए 69
तू जो माएल-ब-करम था, तो ज़माने का मुझे होश नहीं रहता था 70
इसी सुर्मई रौशनी में रवाँ दिल का हारा हुआ कारवाँ है 71
सब दुआएँ हो चुकीं, अंजामे दरमाँ हो चुका 72

मज़हर इमाम : लफ़्ज़ के रम्ज़-शनास

मज़हर इमाम इस दौर के एक मुमताज़ और साहबे-तर्ज़ शायर हैं। यूँ तो उन्होंने नज़्में भी कही हैं और उन नज़्मों को अरबाबे नज़र ने सराहा भी है लेकिन दरअसल उनके दर्दो दाग़ और सोज़ो-साज़ का ज़्यादा इज़हार उनकी ग़ज़लों में होता रहा है। शायरी के अलावा नस्र में उनकी तहरीरें भी अदबी हल्क़ों से ख़राजे-तहसीन वसूल कर चुकी हैं, और *आती जाती लहरें* के नाम से शाए शुदा उनके तनक़ीदी मज़ामीन के मजमूएँ में एक रचा हुआ ज़ौक़ और एक शगुफ़्ता असलूब मिलता है। हमारे क्लासिकी सरमाये पर उनकी नज़र गहरी है और फ़िक्रोफ़न के नये मैंलानात से भी वो अच्छी तरह वाकिफ़ हैं। शाइस्तगी, ज़ौक़े सलीम और दर्दमंदी उनकी शख़्सियत ही नहीं, उनकी शायरी की भी खुसूसियात हैं। इससे पहले उनके कलाम के दो मजमूएँ *ज़ख्मे तमन्ना* और *रिश्ता गूँगे सफ़र का* शाए हो चुके हैं। ये तीसरा मजमूआ *पिछले मौसम का फूल* उन ग़ज़लों पर मुश्तमिल है जो उन्होंने अपने कश्मीर के क़याम के ज़माने में लिखी हैं। बेश्तर ग़ज़लें रसालों में शाए होकर मक़बूल हो चुकी हैं, लेकिन इस मजमूए की अशाअत से उनकी खुसूसीयात को समझने और आज की ग़ज़ल में इन ग़ज़लों का मक़ाम मुतअय्यन करने में यक़ीनन मदद मिलेगी।

ग़ज़ल शायरी की बड़ी अनोखी विधा है। ये इशारे, कनाए, रहस्य, कम-से-कम अल्फ़ाज़ के ज़रिये ज़्यादा से ज़्यादा काम लेने, मानी की कई परतों को बरतने, मद्धिम चराग़ों की लौ से ज़हन में चराग़ाँ करने का फ़न है। यहाँ सूरज की तेज़ रौशनी का गुज़र नहीं, चाँदनी का जादू जगाया जाता है। ग़ज़ल पुराने शायरों से लेकर अब तक बहुत से रंगों, सिम्तों, तजर्बों, वारदातों, कैफ़ियतों और जलवों को जज़्ब कर चुकी है। तजर्बे के शौक़ में ये ग़ज़ल के बाज़ आदाब से बग़ावत पर भी आमादा रही है। मगर मजमूई तौर पर ये ज़िन्दगी की हर मंज़िल, ज़हन की हर करवट और मिज़ाज के हर मोड़ का साथ देती रही है। ये सारी शायरी नहीं है, लेकिन शायरी की एक अहम, क़ाबिले क़दर और जानदार विधा है। ये न 'अर्ध बर्बर' है न 'गर्दन मार देने के योग्य'। इसका फ़न हमारे सदियों के रयाज़ का फल है और इसमें हमारी ज़िन्दगी, तहज़ीब, माहौल, परम्परा, मिज़ाज और मख़सूस ज़ेहन की भरपूर अभिव्यक्ति हुई है। ये दो और दो चार का फ़न नहीं है। यहाँ

बयान की नहीं, हुस्ने वयान की कारफ़रमाई है। ये व्यवस्था, विस्तार, निरंतरता, और संरचना से बेनयाज़, अपने इशारों, अपने निशतरों और अपनी फ़ज़ा आफ़रीनी के ज़रिए अपनी ताक़त का लोहा मनवाती है। ये निजी अनुभवों को विश्वजनीन आयाम देती है। ये कारोवारे शौक़ को ज़िन्दगी के हर रंग में देखती और दिखाती है। ये दिल की वाणी भी है और सृष्टि की कहानी भी। मगर सृष्टि की कहानी को यहाँ दिल की वाणी का रंगो-आहंग इख़्तियार करना पड़ता है।

आधुनिक ग़ज़ल में तग़ज़्ज़ुल का वो जलवा है जिसके पीछे इस दौर की पीड़ा, जानकारी, नश्शे, ज़हर, एहसास और ज्ञान की कई दिशाएँ मिलती हैं। कुछ ग़ज़लगो फ़न के क्लासिकी रचाव का लिहाज़ रखते हैं, मगर उनके एहसास का ज़ाएक़ा चूँकि नया है, इसलिए उनकी ग़ज़ल का मिज़ाज भी रिवायत के विस्तार की नुमाइन्दगी करता है, पूरी अवहेलना की नहीं, हाँ, जिन लोगों के यहाँ नए एहसास ने क्लासिकी फ़न के आदाब का साया क़बूल नहीं किया और शाहराह पर चलने की वजाय पगडंडी पर चले, उनके यहाँ नया इज़हार हिरन पर घास लादने के समानार्थक वन जाता है। मैं तजर्बात से हमदर्दी रखता हूँ, मगर रिवायत को अक्सर फ़रामोश कर देने को ज़ेह्नी कजरवी और गुमराही समझता हूँ। सारी रिवायत को खँगालने, किसी भूली-बिसरी रिवायत को ज़िन्दा करने, किसी पुरानी रौ को नई आवो-ताव देने से ही मानी-ख़ेज़ तजर्बा वजूद में आता है। फ़न पटरी पर चलने का नाम नहीं, मगर सफ़र में सिम्त का एहसास तो ज़रूरी है।

मज़हर इमाम की ग़ज़लों में मुझे रिवायत की पासदारी के साथ नये एहसास और ज्ञान की जलवागिरी मिलती है। ये नया एहसास, हुस्न के नित नये करिश्मों और इश्क़ के नित नए आदाव की अक्कासी में ज़ाहिर होता है और ज़िन्दगी और उसकी हार-जीत, उम्मीद और डर, हौसलों और हसरतों, ज़ख़्मों और उलझनों की आइना-बन्दी में भी। वज़ाहिर यहाँ जिस्म की पुकार मिलेगी। मगर ये जिस्म की पुकार आत्मा की फ़रियाद के साथ है, इसलिए गहराई और अर्थवत्ता रखती है।

मज़हर इमाम के तजर्बे में मख़सूस क्या है? उनकी शायरी में किन विषयों और उनसे संबंधित बातों का ज़िक्र बार-बार आता है? क्या ज़ात उनके लिए सब कुछ है या कायनात भी? वो ज़िन्दगी को किस नज़र से देखते हैं? वो रोमानी मिज़ाज रखते हैं या हक़ीक़त पसन्द हैं? क्या वो सिर्फ़ समाजी इंसान हैं या अपनी ख़ुशियों और ग़मों, अपनी महरूमियों और मसर्रतों में गिरफ़्तार हैं?—इन सवालात का जवाब पाने के लिए हमें उनके अशआर पर नज़र रखनी होगी—

जाने किस राह चलूँ, कौन से रुख़ मुड़ जाऊँ
मुझ से मत मिल, कि ज़माने की हवा हूँ मैं भी!

बलाए शाम के साए थे और वादी-ए-दिल
अगरचे सुब्ह का चेहरा धुला धुला-सा था

हमको मिला तो साया-ए-अब्रे सियह मिला
वर्ना इस आसमान पें शम्सो क़मर भी थे

धूप में पहले पिघल जाते थे लोग
अबके क्या गुज़री कि पत्थर हो गए!

अब देखिए कि फ़स्ल हो किसके नसीब में
मैं तुख़्मे ख़्वाब रात की खेती में बो गया

मुझे भी कुछ न कुछ करना पड़ेगा
ज़माना सरफिरा है और मैं हूँ

किस सलीक़े से मुहरें लगाई गईं
लब जो खोले किसी ने, अचंभा हुआ।

कब धनक सो गई कब सितारे बुझे
कोई कब सोचता है तिरे शहर में!

कोई खुश्बू की झंकार सुनता नहीं
कौन-सा गुल खिला है तिरे शहर में!

अब क्या ये धुआँ-सा उठ रहा है
वो शह्र तो कब का जल चुका है

दुनिया थी आँसुओं में नहाई हुई किताब
भीगे हुए वरक़ का हम इक इक़्तबास थे

हर एक शख़्स का चेहरा उदास लगता है
ये शहर मेरा तबीयत शनास लगता है

वो बेजहत का सफ़र था, सवादे शाम न सुबह
कहाँ पे रुकते, कहाँ यादे रफ़्तगाँ करते!

मज़हर इमाम तरक्क़ी पसन्दी से चले थे। वो जदीदियत की तरफ़ माएल हुए, मगर उनका शुमार जदीदियों में भी नहीं किया जा सकता। हाँ, इन दोनों प्रवृत्तियों से उन्होंने अपने ज़ेह्नी सफ़र में असर क़बूल किया है। उनके पास संवेदनशील ज़ेह्न है और वो ज़िन्दगी की उस त्रासदी से, जो आज के दौर की पहचान है, आशना हैं। नतीजा ये है कि ख़्वाब के साथ, स्वप्नभंग, शहर के साथ उसका धुआँ, धूप के साथ पत्थर लोग, सुबह का धुला-धुला चेहरा और बलाए शाम के साए, ज़माने की हवा और उसकी मन की मौज, सलीक़े से मुहरें लगाना, उदास चेहरे—मज़हर इमाम के यहाँ एक दास्तान कहते हैं। ये सामायिक संवेदना की दास्तान हैं। इसमें वो चीख़ता हुआ समाजी शऊर नहीं है, जो हमारे एक दौर

की विशेषता थी। इसमें अपने ज़ख़्मों को खुजाने और उनसे लज़्ज़त हासिल करने वाला मरीज़ ज़ेह्न भी नहीं है, जो कभी-कभी आज की ग़ज़ल में भी अपनी झलक दिखाता है। इसमें एक ज़ख़्मी रूह की फ़रियाद है, मगर फ़रियाद की लय फ़न के आदाब के मुताबिक़ मद्धिम, इसलिए ज़्यादा असर अंगेज़ है। ग़ज़ल का फ़न एक तौर पर सादगी (अंडर स्टेटमेंट) का फ़न है। मीर के निम्न अशआर से ये वात स्पष्ट हो जाएगी :

हमारे आगे तिरा जब किसू ने नाम लिया
दिले सितमज़दा को हमने थाम-थाम लिया
होगा किसी दीवार के साए के तले मीर
क्या काम मुहब्बत से उस आराम तलब को
कहता था किसी से कुछ, तकता था किसी का मुँह
कल मीर खड़ा था हाँ, सचमुच कि दिवाना था

यहाँ अल्फ़ाज़ शोर नहीं मचाते, सीना नहीं पीटते, चीख़ों से आसमान सर पर नहीं उठाते, लेकिन उनका असर वहुत गहरा होता है। हमारे दौर में एक तरफ़ तो समाज की व्यवस्था हमारे ख़्वाबों और मंसूबों के मुताबिक़ नहीं है, दूसरी तरफ़ जब्र भेस बदल बदलकर सामने आता रहता है। तीसरे हर तरह के हंगामे और फ़सादात ने ज़िन्दगी को एक ख़ौफ़नाक ख़्वाब बना दिया है। मज़हर इमाम की काव्यात्मक टिप्पणियाँ भी दरअसल कुछ न कहने में इतना कुछ कह जाती हैं कि हम ज़िन्दगी की उन त्रासदियों को गोया अपने एहसास की उँगलियों से छू लेते हैं।

आधुनिक दौर की एक विशेषता ये भी है कि अब समाज चिन्तन का केन्द्र नहीं है, वल्कि वो व्यक्ति है जो इस समाज में साँस ले रहा है। कुछ लोग इसके मानी ये लेते हैं कि अदीव अपने समाज से कट कर रह गया है और सिर्फ़ आत्म-व्यथा में गिरफ़्तार है, लेकिन हक़ीक़त में ऐसा नहीं है और हो भी नहीं सकता। साहित्य की रचना व्यक्ति करता है और व्यक्तियों के तजर्वों ही से वो फ़न का रंग महल बनाता है। इसलिए अगर समाज के समन्दर में व्यक्ति की एक मौज पर नज़र केन्द्रित होती है तो वह अंततः मौजों के ज़रिए समन्दर ही की दास्तान होती है और चूँकि प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति से परोक्ष अभिव्यक्ति ज़्यादा असर अंगेज़ होती है, इसलिए संकेत से प्रतीक और रूपक के ज़रिए जो बात कही जाती है, वो लफ़्ज़ को अनेकार्थक बना देती है और हर शब्द अपने सम्पर्क के ज़रिए हीरे की तरह हर पहलू से शुआएँ देने लगता है। ग़ज़ल में अर्थों का तिलिस्म ये, पहलूदारी या सामने की बात के बजाय तहदारी, दूसरी विधाओं से ज़्यादा होती है। यही इसका तर्क है। अगरचे ग़ज़ल शौक़ का कारोवार है, मगर ये शौक़ का कारोबार पूरी ज़िन्दगी तक फैला हुआ है। यानी हुस्न और इश्क़ सिर्फ़ हुस्न-इश्क़

नहीं हैं, ज़िन्दगी के दो ज़ाविए, दो रंग, दो जलवे हैं। किसी ने कहा भी है कि इश्क़िया शायरी सिर्फ़ इश्क़िया नहीं होती, और बहुत कुछ होती है। इसलिए इश्क़िया शायरी को सिर्फ़ मामलात तक सीमित नहीं समझना चाहिए। गो मामलात की अहमियत अपनी जगह प्रामाणिक है। बल्कि उसमें जो जज़्बे की गहराई, लगन और समर्पण मिलते हैं और इस तरह उस जज़्बे के ज़रिए ज़िन्दगी के समन्दर में ताज़ा गुस्ल करने और इस तरह ज़िन्दगी से जुड़ी एक नई दृष्टि, एक नयी चेतना हासिल करने का मौक़ा मिलता है, इसकी क़दर करनी चाहिए। ज़रा मज़हर इमाम के इन अशआर पर ग़ौर कीजिए :

कहा ये सबने कि जो वार थे, उसी पर थे
मगर ये क्या कि बदन चूर-चूर मेरा था

न जाने मौसमे तलवार किस तरह गुज़रा
मिरे लहू का शजर तो झुका झुका-सा था

वो नाम जिसके लिए ज़िन्दगी गँवाई गई
न जाने क्या था, मगर कुछ भला भला-सा था

इसरार था कि ज़िक्र हमारी तरफ़ से हो
वर्ना हमारे हाल से वो बाख़बर भी थे

हिना अब दरख़्तों पे उगती नहीं,
मिरे ख़ून में हाथ तर कीजिए

बीच में कुछ तो रह-व-रस्मे तकल्लुफ़ रक्खो
अजनबी यूँ नहीं मिलते हैं शनासा की तरह!

कश्तियों की क़ीमतें बढ़ने लगीं,
जितने सहरा थे समन्दर हो गए

ये आरज़ू थी कि यक रंग हो के जी लेता
मगर वो आँख, जो शैताँ भी है फ़रिश्ता भी!

आया था वो बहार का मौसम गुज़ारने
अपने लहू में अपना सरापा भिगो गया

वो पुल कहाँ है, जो दुनिया से जोड़ता था मुझे
जो तू क़रीब हो, सबसे क़रीब आऊँ मैं

जो तू मिला भी तो दो पल का साथ था तेरा
मिरी जबीं पे मगर कब से ख़ाके दुनिया थी

जागती आँखें लुटाती हैं ज़रो गौहर अभी
शह्र से लौटे नहीं ख़्वाबों के सौदागर अभी

बस मैं, शिकस्त व फ़तह मिरा मसअला न था
यूँ तो इसी महाज़ पे जितने थे, सब मिले

न मुझमें ही, शोलाए तलब था, न तुममें जोशे सपुर्दगी था
मुझे भी एहसासे कमतरी था, तुम्हें भी एहसासे कमतरी था।

उससे पहली सी इनायत की तवक्क़ो न रखूँ
अपने सहराओं पे खुद बरसूँ, घटा हो जाऊँ!

उसने किस नाज़ से बख़्शी है मुझे जाए पनाह
यूँ, कि दीवार सलामत हो, मगर घर न रहे।

बज़ाहिर ये अशआर एक ज़ाती वारदात की निशानदेही करते हैं, मगर मामला इतना सीधा-सादा नहीं है। इन अशआर में वो नज़र है, जो इश्क़ की ज़बान में ज़िन्दगी की दास्तान कहती है। जो तजर्बा है वो पहलूदार है और अब ये सिर्फ़ एक इश्क़ का तजर्बा नहीं रहा, ज़िन्दगी की पेचीदगी, रहस्य, विरोधाभास, तवाहकारी और ताज़ाकारी सबका तजर्बा बन गया है। उर्दू ग़ज़ल में ये बात शुरू से है, मगर इस दौर में और प्रगट हो गई है और मज़हर इमाम के यहाँ तो आज की ज़िन्दगी के इसरार व रमूज़ पर ख़ासी रोशनी डाली गई है।

एक और बात जो मज़हर इमाम की ग़ज़लों में मुझे क़ाबिले तवज्जह मालूम हुई, वो उनकी फ़ज़ा आफ़रीनी है। फ़ज़ा आफ़रीनी से मेरी मुराद यह है कि शेर में तजर्बे का एक नक़्श ही नहीं उभरता बल्कि कई हलके और गहरे रंगों से ज़ेह्न में एक मंज़रनामा निर्मित हो जाता है। ये अशआर देखिए—

रंग दर रंग धनक थी कि छलक आई थी
याद का शहर, कि आइना दर आइना था

क्या पता था एक दिन तस्वीर बन जाएँगे हम
ख़ामुशी चुपके से आएगी, सदा ले जाएगी

रुतों के साथ दिलदारी की रंगत भी बदलती है
वो हर मौसम से गुज़रा है, मगर अक्सर नहीं बदला

मज़हर इमाम शब्दों के रहस्य के मर्मज्ञ हैं। इससे यह बात साबित होती है कि वो कला के तौर-तरीक़े जानते हैं। लफ़्ज़ उनके यहाँ फावड़ा या तलवार नहीं, नश्तर है। उनकी लौ धीमी मगर पुरसोज़ है। उसमें जा बजा मौसमे तलवार, वजूद

की रिमझिम, फूल टाँकना, दिलदारी की रंगत, खुश्बू की झंकार, आँसुओं में नहाई हुई किताब, भीगे हुए वरक़, एहसासे कमतरी, बेजहत का सफ़र, शहर का मंज़र जैसे अलफ़ाज़ इस संवेदना की अभिव्यक्ति करते हैं, जो इस दौर की विशेषता है। खुशी के एहसास के साथ और इसके बावजूद ग़म की फ़ज़ा, उनके मिज़ाज का ही नहीं, इस दौर के तजर्बे का भी सच है। मज़हर इमाम के तजर्बे का सच हमें जो दृष्टि प्रदान करता है उसकी क़द्रो क़ीमत मुसल्लम है। मुझे यक़ीन है कि उनकी कहानी वक़ौले सीमाब बहुतों को रूदादे जहाँ मालूम होगी। अच्छी शायरी यही तो होती है। उनका एक शेर है—

माना की धनक बनकर अल्फ़ाज़ में ढल जाओ
तुम मोम हो या शोला, जो कुछ हो, पिघल जाओ

मज़हर इमाम ने जिन बह्रों का इंतिख़ाब किया है, वो बड़ी लयात्मक और ताज़गी-भरी है। वो काव्य पर अपनी निपुणता ज़ाहिर करने के लिए बाज़ लोगों की तरह अपरिचित छंदों में शेर नहीं कहते। उनकी रदीफ़ें ज़ाहिर करती हैं कि वो मिसरा तरह पर नहीं लिखी गईं, बल्कि उनके जज़्बात के मोड़ और तजर्बात के बहाव की प्रमाण हैं। उनमें कश्मीर के हुस्न और दिलनवाज़ मौसम के असरात भी मिलते हैं, मगर मज़हर इमाम को प्रकृति से ज़्यादा इंसान से दिलचस्पी है।

वो ख़ासतौर से ये देखते हैं कि बाहर कुछ न बदलने के बावजूद अन्दर क्या कुछ बदल गया है।

—आले अहमद सुरूर

हम्द

तिरा ही बह्र[1], सफ़ीना[2] रवाँ[3] भी तेरा है
भँवर भी तेरे हैं और बादबाँ[4] भी तेरा है

है तेरी बज़्म में आख़िर कहाँ जगह मेरी
चराग़ भी हैं तिरे और धुआँ भी तेरा है

मुझे तो नज़्र[5] भी करने को कुछ नहीं अपना
जबीं[6] की ख़ाक[7] तिरी, आस्ताँ[8] भी तेरा है

नक़्शे-पा[9] को उठाए कहाँ कहाँ जाऊँ
कि गर्दे-रह[10] भी तिरी, कारवाँ भी तेरा है

दिया है क्यों मुझे लौहो-क़लम[11] का बारे गिराँ[12]
कि गर्दिशें[13] भी तिरी, आसमाँ भी तेरा है

बस इक कशाकशे[14] बेनाम और मैं बेबस
नतीजा भी है तिरा इम्तहाँ भी तेरा है

मैं थक के बैठ रहूँ या क़दम बढ़ाए चलूँ
फ़ना[15] भी तेरी है नामो निशाँ भी तेरा है

---

1. समुन्दर; 2. नाव; 3. वहती हुई; 4. पाल; 5. अर्पण, उपहार; 6. माथा, पेशानी; 7. मिट्टी; 8. चौखट; 9. पाँव के निशान; 10. रास्ते की धूल; 11. तख़्ती और क़लम; 12. भारी बोझ; 13. चक्र; 14. संघर्ष; 15. नाश, विनाश।

तू है गर मुझ से ख़फ़ा[1], ख़ुद से ख़फ़ा हूँ मैं भी,
मुझ को पहचान! कि तेरी ही अदा हूँ मैं भी

एक तुझ से ही नहीं फ़स्ले-तमन्ना[2] शादाब[3]
वही मौसम हूँ, वही आबो-हवा[4] हूँ मैं भी

मुझ को पाना हो तो हर लम्हा तलब[5] कर न मुझे
रात के पिछले पहर माँग! दुआ हूँ मैं भी

सब्त[6] हूँ दस्ते-ख़मोशी[7] पे हिना[8] की सूरत[9]
नाशुनीदा[10] ही सही, तेरा कहा हूँ मैं भी

जाने किस राह चलूँ, कौन से रुख़ मुड़ जाऊँ
मुझ से मत मिल, कि ज़माने की हवा हूँ मैं भी

यूँ न मुरझा कि मुझे ख़ुद पे भरोसा न रहे
पिछले मौसम में तिरे साथ खिला हूँ मैं भी

---

1. नाराज़; 2. कामना की ऋतु; 3. हरी-भरी; 4. जलवायु; 5. माँगना; 6. अंकित; 7. ख़ामोशी (मौन) के हाथ; 8. मेहंदी; 9. तरह; 10. अनसुना

काश! अब अपनी तमन्ना का ख़ुदा हो जाऊँ
वो हमा-गोश[1] है, बे-सौतो-सदा[2] हो जाऊँ

उससे पहली सी इनायत[3] की तवक़्क़ो न रखूँ
अपने सहराओं[4] पे ख़ुद बरसूँ, घटा हो जाऊँ

अपनी ही ख़ाक उड़ाता फिरूँ साहिल साहिल
तेरे दरियाओं से गुज़रूँ तो हवा हो जाऊँ

क्या लकीरें हैं कि आता ही नहीं मौसमे-क़ुर्ब[5]
क्या मैं सर-ता-ब-क़दम[6] दस्ते-दुआ[7] हो जाऊँ

तू वो दौलत, कि जिसे ख़र्च न होना आया
मैं हूँ इक क़र्ज़, अगर तुझसे अदा हो जाऊँ

इस दो राहे पे खड़ा सोच रहा हूँ कब से
तुझे से बिछड़ूँ, कि ज़माने से जुदा हो जाऊँ

---

1. पूरी तरह सुनता हुआ; 2. बिना शब्दों के, ख़ामोश; 3. मेहरबानी; 4. मरुस्थल; 5. मिलन की ऋतु; 6. सिर से पाँव तक; 7. दुआ के लिए फैले हाथ

उसको ये ज़िद है कि रह जाए बदन, सर न रहे
घूमती जाए ज़मीं और कोई महवर[1] न रहे

उसने हिम्मत जो बढ़ाई भी तो रखा ये लिहाज़
कोई बुज़दिल न बने, कोई दिलावर न रहे

उसने इस तरह उतारी मिरे ग़म की तस्वीर
रंग महफ़ूज़[2] तो रह जाएँ ये मंज़र न रहे

उसने किस नाज़[3] से बख़्शी है मुझे जाए-पनाह[4]
यूँ कि दीवार सलामत[5] हो, मगर घर न रहे

अब ये साज़िश[6] है कि लिक्खे न कोई क़िस्सा-ए-दिल
लफ़्ज़[7] रह जाएँ मगर कोई सुख़नवर[8] न रहे

अबके आँधी भी चली जब तो सलीक़े से चली
यूँ, कि रह जाए शजर[9], शाख़े-समरवर[10] न रहे

---

1. धुरी; 2. सुरक्षित; 3. अभिमान; 4. शरण की जगह; 5. सुरक्षित; 6. षड्यंत्र, साँठगाँठ; 7. शब्द; 8. शब्द बोलने वाला, कवि; 9. पेड़; 10. फलदार डाली

हरफ़े-दिल[1] ना रिसा[2] है तिरे शह्र में
हर सदा बे सदा है तिरे शह्र में

कोई ख़ुश्बू की झंकार सुनता नहीं
कौन-सा गुल खिला है तिरे शह्र में

कब धनक सो गई, कब सितारे बुझे
कोई कब सोचता है तिरे शह्र में!

अब चिनारों पे भी आग खिलने लगी
ज़ख्म लौ दे रहा है तिरे शह्र में

जितने पत्ते थे, सब ही हवा दे गए
किस पे तकिया रहा है तिरे शह्र में

एक दर्दे-जुदाई[3] का ग़म क्या करें
किस मर्ज़ की दवा है, तिरे शह्र में

अब किसी शहर की चाह बाक़ी नहीं
दिल कुछ ऐसा दुखा है तिरे शह्र में

---

1. दिल की बात; 2. न पहुँचने वाली; 3. प्रेमिका से बिछुड़ने का दुख

वही दश्ते-बला[1] है और मैं हूँ
ज़माने की हवा है और मैं हूँ

तुझे ऐ हम सफ़र! कैसे सँभालूँ
बहकता रास्ता है और मैं हूँ

सकूते-कोह[2] है और साया-ए-दर[3]
सदाए मासिवा[4] है और मैं हूँ

मगर शाख़ों से पत्ते गिर रहे हैं
वही आबो हवा है और मैं हूँ

ये सारी बर्फ़ गिरने दो मुझी पर
तपिश[5] तुमसे सिवा है और मैं हूँ

कई दिन से नशेमन[6] ख़ाके-दिल[7] का
सरे-शाख़े-हवा[8] है और मैं हूँ

पहाड़ों पर कहीं बारिश हुई है
ज़मीं महवे-दुआ[9] है और मैं हूँ

मुझे भी कुछ न कुछ करना पड़ेगा
ज़माना सरफिरा है और मैं हूँ

---

1. मुसीबतों का जंगल; 2. पहाड़ों की ख़ामोशी; 3. दरवाज़े की छाँव; 4. परमात्मा के सिवा (सब कुछ); 5. जलन, तपन; 6. घोंसला; 7. दिल की राख; 8. हवा की डाली पर; 9. दुआ में मग्न

अब क्या ये धुआँ-सा उठ रहा है
वो शह्र तो कब का जल चुका है

तलख़ाबे-जहाँ[1] कि आतिशे-जाँ[2]
सब हिज्र[3] का तेरे ज़ाएक़ा[4] है

शायद कभी ग़म पलट भी आए
तन्हा[5] मुझे छोड़कर गया है

तुम से तो उमीद ही कहाँ थी
मौसम भी नज़र बदल रहा है

बरसों से चिता में जल रहा हूँ
लम्हें के गुनाह की सज़ा है

ये ख़्वाब भी मेरी शब से ले लो
दिन को मिरे पास क्या रहा है

मेरी ही तरह गिनो सितारे
तुमने ये मज़ा कहाँ चखा है

मैं तेरा ही होके रह गया हूँ
वर्ना ये जहाँ भी क्या बुरा है

खुश्बू से कहो इधर भी आए
सुनते हैं गुलाब खिल चुका है

---

1. दुनिया से मिली हुई कड़वाहट; 2. आत्मा की आग; 3. जुदाई; 4. स्वाद; 5. अकेला

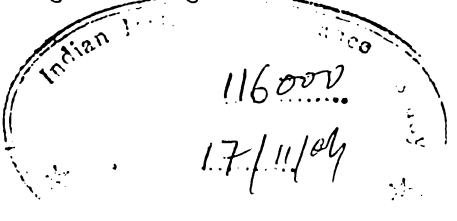

जागती आँखें लुटाती हैं ज़रो-गौहर[1] अभी
शह्र से लौटे नहीं ख़्वाबों के सौदागर अभी

क़त्ल होते जा रहे हैं नीले पीले शोख़ रंग
पेश-मंज़र[2] बन न जाए, है जो पस-मंज़र[3] अभी

साँप काटेंगे उसे और ज़ह्र हम तक आएगा
ये तमाशा भी दिखाएगा वो बाज़ीगर अभी

देख लो शायद बदल जाए कभी मौसम का रंग
इस तरह खोलो न अपने दर्द का दफ़्तर अभी

गिर रहे हैं ज़र्द पत्ते पेड़ से फ़ालिज[4] की तरह
वादीए कश्मीर है बीमार का बिस्तर अभी

---

1. सोना मोती; 2. आगे का दृश्य; 3. पीछे का दृश्य; 4. पक्षाघात

तिरे ख़याल का शोला थमा-थमा-सा था
तमाम शहरे तमन्ना बुझा-बुझा-सा था

न जाने मौसमे-तलवार किस तरह गुज़रा
मिरे लहू का शजर तो झुका-झुका-सा था

हमें भी नींद ने थपकी दी, सो गए तुम भी
तमाम हादसए-शब[1] सुना-सुना-सा था

बलाए-शाम के साए थे और वादीए-दिल[2]
अगरचे सुब्ह का चेहरा धुला-धुला-सा था

चराग़ मंज़िले दिल पर जलाके क्या करते
वफ़ा का क़ाफ़ला कब से रुका-रुका-सा था

वो नाम जिसके लिए ज़िन्दगी गँवाई गई
न जाने क्या था मगर कुछ भला-भला-सा था

---

1. रात की दुर्घटना; 2. दिल की घाटी

ये खेल, भूल भुलय्याँ में हमने खेला भी
तिरी तलाश भी की और ख़ुद को ढूँढा भी

मिरा नसीब थी हमवार[1] रास्ते की थकन
मिरा हरीफ़[2] पहाड़ों पे चढ़ के उतरा भी

ये आरज़ू थी कि यक रंग होके जी लेता
मगर वो आँख, जो शैताँ भी है, फ़रिश्ता भी

समन्दरों से गुहर[3] कब के हो गए नापैद[4]
तुम्हारे साथ में गहराइयों में उतरा भी!

बरहंगी[5] पे भी गुज़रा कबाए-ज़र[6] का गुमाँ
लिबास पर हवा जुज़्चे-बदन[7] का धोका भी

गरजने वाले बरसते नहीं, ये सुनते थे
गुज़श्ता[8] रात वो गरजा भी और बरसा भी!

---

1. समतल; 2. दुश्मन, शत्रु; 3. मोती; 4. गुम, ग़ायब; 5. नग्न, नंगापन; 6. सुनहरा लिबास; 7. बदन का हिस्सा; 8. पिछली, गुज़री हुई

दुनिया का ये एज़ाज़[1], ये इनआम बहुत है
मुझ पर तिरे इकराम[2] का इल्ज़ाम बहुत है

इस उम्र में ये मोड़ अचानक ये मुलाक़ात
ख़ुश-गाम[3] अभी गर्दिशे-अय्याम[4] बहुत है

बुझती हुई सुबहें हों कि जलती हुई रातें
तुझ से ये मुलाक़ात सरे शाम बहुत है

मैं मरहमते-ख़ास[5] का ख़्वाहाँ[6] भी नहीं हूँ
मेरे लिए तेरी निगहे आम बहुत है

कमयाब[7] किया है उसे बाज़ारे-तलब[8] ने
हम थे, तो वो अरज़ाँ[9] था, पर अब दाम बहुत है

उस घर की बदौलत मिरे शेरों की है शोहरत
वो घर कि जो इस शह्र में बदनाम बहुत है

---

1. सम्मान; 2. सत्कार, मेहरवानी; 3. अच्छी तरह चलने वाला; 4. ज़माने का चक्र;
5. ख़ास मेहरवानी; 6. इच्छुक, ख़्वाहिशमंद; 7. दुष्प्राप्य; 8. माँग; 9. सस्ता

बुलन्द-बाम[1] हवा का मकान कितना था
मैं छू सका जो उसे सख़्त जान कितना था

ज़मीन पाँव तले ज़लज़लों की ज़द में थी
हमारे सर पे मगर आसमान कितना था

ख़ुद अपने आप तलक उसकी ना रसाई थी
वो नामवर था, मगर बेनिशान कितना था

ज़माना बीत चुका, क्या कहें, कि पहले पहल
वो जब मिला था तो हम को गुमान कितना था

तमाम अज़्ज़े-बदन[2] चीख़ता-सा लगता था
वो देखने में मगर बेज़बान कितना था

तमाम लज़्ज़ते कामो-दहन[3] उसी से थी
वो मेहमाँ था मगर मेज़बान कितना था

करम थे मुझ पे कुछ इतने, मैं सोचता कैसे
कि दूसरों पे भी वो मेहरबान कितना था

---

1. ऊँची छत वाला; 2. बदन का अंग-अंग; 3. हलक़ और मुँह

भरा हुआ तिरी यादों का जाम कितना था
सहर के वक़्त तक़ाज़ाए शाम कितना था

रुख़े-ज़वाल[1] पे रंगे दवाम[2] कितना था
कि घट के भी मिरा माहे-तमाम[3] कितना था

था तेरे नाज़[4] को कितना मिरी अना[5] का ख़याल
मिरा ग़रूर भी तेरा ग़ुलाम कितना था

जो पौ फटी तो हर इक दास्ताँ तमाम हुई
मगर उन्हीं के लिए इन्तज़ाम कितना था

उन्हीं को याद किया जब तू कुछ न याद आया
वो लोग जिनका ज़माने में नाम कितना था

अभी शजर से जुदाई के दिन न आए थे
पका हुआ था वो फल, फिर भी ख़ाम[6] कितना था।

वहाँ तो कोई न था एक अपने ग़म के सिवा
मिरे मकाँ पे मगर इज़्दिहाम[7] कितना था

---

1. पतन का चेहरा; 2. निरंतरता; 3. पूरा चाँद; 4. अभिमान; 5. गर्व; 6. कच्चा; 7. भीड़

ये तज्रबा भी करूँ, ये भी ग़म उठाऊँ मैं
कि ख़ुद को याद रखूँ, उसको भूल जाऊँ मैं

उसी से पूछ के देखूँ वो मेरा है कि नहीं
कि जान बूझ के कितने फ़रेब खाऊँ मैं

ब्रहनगी[1] में भी वो जामा-ज़ेब[2] कितना है
महे-ख़याल[3] को पोशाक क्या पहनाऊँ मैं

वो पुल कहाँ है, जो दुनिया से जोड़ता था मुझे
जो तू क़रीब हो, सब से क़रीब आऊँ मैं

कभी तो हो मिरे एहसासे-कमतरी[4] में कमी
कभी तो ये हो कि उसको भी याद आऊँ मैं

वो शख़्स है कि नसीमे-सहर[5] का झोंका है
बिखर ही जाऊँ जो उसको गले लगाऊँ मैं

अज़ाँ के बाद दुआ को जो हाथ उठाए वो
इमाम! अपनी नमाज़ें भी भूल जाऊँ मैं

---

1. वेलिबासी; 2. ख़ुशपोश; 3. कल्पना का चाँद; 4. हीन भावना; 5. सुवह की हवा

ज़िन्दगी काविशे-बातिल[1] है, मिरा साथ न छोड़
तू ही इक उम्र का हासिल[2] है, मिरा साथ न छोड़

लोग मिलते हैं सरे राह, गुज़र जाते हैं
तू ही इक हमसफ़रे-दिल है, मिरा साथ न छोड़

तू ने सोचा है मुझे, तू ने सँवारा है मुझे
तू मिरा ज़ेह्न, मिरा दिल है, मिरा साथ न छोड़

तू न होगा तो कहाँ जाके जलूँगा शब भर
तुझ से ही गर्मीए महफ़िल है, मिरा साथ न छोड़

मैं कि बिफरे हुए तूफ़ाँ में हूँ लहरों लहरों
तू कि आसूदए-साहिल[3] है, मिरा साथ न छोड़

इस रिफ़ाक़त[4] को सिपर[5] अपनी बना लें, जी लें
शह्र का शह्र ही क़ातिल है, मिरा साथ न छोड़

एक मैंने ही उगाए नहीं ख़्वाबों के गुलाब
तू भी इस जुर्म में शामिल है, मिरा साथ न छोड़

अब किसी राह पे जलते नहीं चाहत के चराग़
तू मिरी आख़िरी मंज़िल है, मिरा साथ न छोड़

---

1. निष्फल परिश्रम; 2. प्राप्ति, लाभ; 3. किनारे पर संतुष्ट; 4. मित्रता; 5. ढाल

इक जब्र की हद में हो, उस हद से निकल जाओ
तुम ज़ुल्फ़ की सूरत हो, खुल जाओ, मचल जाओ

मानी[1] की धनक बनकर अलफ़ाज में ढल जाओ
तुम मोम हो या शोला, जो भी हो पिघल जाओ

शायद कि हवा आए, लौ दिल की बढ़ा जाए
मेहराबे-तमन्ना पर इक बार तो जल जाओ

आए हैं क़रीब अब तो ये तजर्बा कर देखें
कुछ मैं भी बदल जाऊँ, कुछ तुम भी बदल जाओ

---

1. अर्थ

दिलों के रंग न मिलते हों, जब भी होता है
ये कारे-शौक़[1] कभी बेसबब भी होता है

तुम्हारी याद में पीते हैं लोग आँसू भी
तुम्हारे नाम पे जश्ने-तरब[2] भी होता है

बदलते रहते हैं मानी पुराने लफ़्ज़ों के
हमारी बे अदबी में अदब भी होता है

बहुत-से लोग हैं, मिलते बिछड़ते रहते हैं
ये काम पहले भी होता था, अब भी होता है

---

1. अधिक चाहत काम काम; 2. आनंद का उत्सव

रौंदी हुई ज़मीं थी, नए रहगुज़र भी थे
वो थे तो अपने साथ नक़ूशे सफ़र भी थे

आए हैं हम तो लाए हैं यादों के साएबाँ
सुनते हैं इस दयार[1] में यारों के घर भी थे

हमको मिला तो साया-ए-अब्रे-सियह[2] मिला
वर्ना इस आसमाँ पे शम्सो-क़मर[3] भी थे

इसरार था कि ज़िक्र हमारी तरफ़ से हो
वर्ना हमारे हाल से वो बाख़बर भी थे

कल कोई और क्या मिला, ऐसा लगा कि—तुम
बरसों की राख थी, मगर उसमें शरर भी थे

---

1. नगर; 2. काले बादल का साया; 3. सूरज और चाँद

दिल अकेला है बहुत लालए-सहरा[1] की तरह
तुमने भी छोड़ दिया है मुझे दुनिया की तरह

मुझसे यूँ बिछड़ो न तुम अहदे-गुज़श्ता[2] की तरह
दिल के नज़दीक रहो, वादा-ए-फ़र्दा[3] की तरह

तुम हवा हो तो बिखेरो मुझे साहिल साहिल
मौजे-मय[4] हूँ तो बहालो मुझे दरिया की तरह

पास रहते हो तो आता है जुदाई का ख़याल
तुम मिरे दिल में हो अंदेशा-ए-फ़र्दा[5] की तरह

बीच में कुछ तो रह-व-रस्मे-तकल्लुफ़[6] रक्खो
अजनबी यूँ नहीं मिलते हैं शनासा[7] की तरह

---

1. जंगल का फूल; 2. बीता समय; 3. कल (आने) का (झूठा) वादा; 4. मदिरा की लहर;
5. आने वाले कल का डर; 6. संकोच का व्यवहार; 7. परिचित

मैं जानता हूँ वो नज़दीको दूर मेरा था
बिछड़ गया जो मैं उससे, क़ुसूर मेरा था

जो पाँव आए थे घर तक मिरे वो उसके थे
वो दिल, बढ़ा था जो उसके हुज़ूर[1] मेरा था

बड़ा ग़ुरूर था दोनों को हमनवाई[2] पर
निगाह उसकी थी लेकिन सुरूर मेरा था

वो आँख मेरी थी, जो उसके सामने नम थी
ख़मोश[3] वो था कि यौमे-नशूर[4] मेरा था

कहा ये सबने कि जो वार थे उसी पर थे
मगर ये क्या, कि वदन चूर-चूर मेरा था

---

1. सामने, सम्मुख; 2. एक ही सुर में वोलना; 3. चुप; 4. प्रलय का दिन

टूटी हुई दीवार का साया तो नहीं हूँ
मैं तेरा ही भूला हुआ वादा तो नहीं हूँ

जिस नक़्श[1] पे चलने की क़सम खाती है दुनिया
मैं ही वो तिरा नक़्शे-कफ़े-पा[2] तो नहीं हूँ

औरों से मेरा नाम उलझता है तो उलझे
शिकवा तुझे क्यों हो कि मैं तेरा तो नहीं हूँ

क्यों ख़ुद को न चाहूँ कि तिरा दिल तो नहीं मैं
क्यों ख़ुद को भुला दूँ कि ज़माना तो नहीं हूँ

तू मेरी ज़रूरत, मिरी आदत तो नहीं है
महताबे-ज़मीं! मैं तिरा हाला तो नहीं हूँ

बाग़ों से उड़ाई हुई ख़ुश्बू ही सही तू
मैं निकहते-बेबाक[3] का पर्दा तो नहीं हूँ

मैं अक्से-गुरेज़ाँ[4] तो नहीं अपनी अना[5] का
मैं तेरा ही टूटा हुआ रिश्ता तो नहीं हूँ?

मैं आख़िरी जादू तो नहीं साहिरे-शब[6] का
सहमा हुआ मैं सुबह का तारा तो नहीं हूँ

---

1. चिह्न, निशान; 2. पाँव के चिह्न; 3. निर्लज्ज सुगन्ध; 4. भागता हुआ साया; 5. अभिमान; 6. रात का जादूगर

आमादा रक़ाबत[1] पे मिरा दिल ही नहीं था
या फिर कोई इस बार मुक़ाबिल[2] ही नहीं था

इक तेग़े-अना[3] थी जिसे सब चूम रहे थे
अबके सरे-मक़तल[4] कोई क़ातिल ही नहीं था

कब डूब के मरने की खुशी थी हमें, लेकिन
कश्ती को कहाँ लाते कि साहिल ही नहीं था

या थे तिरी राहों में भी काँटों के बगूले
या मैं सफ़रे-लुत्फ़[5] के क़ाबिल ही नहीं था

अबके जो वो बिछड़ा तो कोई शाख़ न सूखी
अवके मिरे पहलू में मिरा दिल ही नहीं था

कुछ अपनी कहें रस्मे मुहब्बत के शनासा[6]
मैं तो हुनरे-शौक़[7] में कामिल[8] ही नहीं था

अब नाम किसी मोड़ पे आता नहीं उनका
अच्छा है, मैं उस भीड़ में शामिल ही नहीं था

---

1. दुश्मनी; 2. समक्ष; 3. अभिमान की तलवार; 4. वध-स्थल में; 5. आनंदित सफ़र; 6. जानकार, 7. प्रेम की कला; 8. माहिर

हवा थी, रंग थी, खुश्बू थी, ख़्वाबे-फ़र्दा[1] थी
वो ज़िन्दगी न सही, ज़िन्दगी का हिस्सा थी

बिछड़ के उससे मैं अपनी तलाश में गुम हूँ
वो निस्फ़[2] ज़ात[3] थी, हर साँस का तक़ाज़ा थी

हमें तो छोड़ गए दोस्त साहिले ग़म पर
जो साथ थी दमे-आख़िर[4], वो मौजे दरिया थी

मज़ा मिला मुझे अपने ही ख़ूँ में तर होकर
तिरे वजूद[5] की रिमझिम में रूह[6] तिश्ना[7] थी

जो तू मिला भी तो दो पल का साथ था तेरा
मिरी जबीं[8] पे मगर कब से ख़ाके-दुनिया[9] थी

तिरा ख़याल था लिपटा हुआ धुँधलकों में
समन्दरों का सफ़र था, हवा बरहना[10] थी

---

1. भविष्य का सपना; 2. आधा; 3. अस्तित्व; 4. आख़िरी वक़्त; 5. अस्तित्व; 6. आत्मा; 7. प्यासी; 8. माथा; 9. दुनिया की मिट्टी; 10 नंगी

वो क़रीब आएगा, ऐसा न कभी सोचा था
हाँ बिछड़ जाएगा, कुछ कुछ मुझे अंदाज़ा था

रात ठहरे हुए दरिया में बहुत हलचल थी
मेरी तन्हाई के साहिल पे कोई उतरा था

उसको देखा तो कई फूल अचानक चमके
ज़ख़्म भूले हुए रिश्तों का तरोताज़ा था

रंग दर रंग धनक थी कि छलक आई थी
याद का शहर, कि आईना दर आईना था

अब तो शर्मिंदा है दिल, अपने किए पर, लेकिन
क्या वो सचमुच तिरी सूरत की तरह सादा था

दुख तो होता है मगर दुख से मफ़र[1] किसको है
क्या यही थी मिरी आवाज़, यही चेहरा था

---

1. छुटकारा

न मुझ में ही शोला-ए-तलब[1] था न तुम में जोशे-सुपुर्दगी[2] था
मुझे भी एहसासे-कमतरी[3] था, तुम्हें भी एहसासे-कमतरी था

तुम्हारे रुख़्सार[1] की चमक थी, कि मेरे जज़्बात की दमक थी
सजा-सजा शब का पैरहन[5] था, घुला-घुला रंगे रौशनी था

था कोई कमज़ोर-सा वो लम्हा कि तुम हमारी तरफ़ खिंचे थे
हमारे दिल ही की तरह कासा[6] तुम्हारे दिल का भी जब तही[7] था

तुम्हारी कुर्बत[8] का मोजज़ा है, मुझे नए बालो पर मिले हैं
ये मुझको महसूस हो रहा है कि मैं वही हूँ जो मैं कभी था

कहा था ये दोस्तों ने मुझसे कि उसकी रंगत का क्या भरोसा
अगरचे मौसम बदल चुका था, मगर जो देखा तो वो वही था

---

1. याचना की आग; 2. समर्पण का आवेश (उत्साह); 3. हीन भावना; 4. गाल; 5. लिवास;
6. पियाला; 7. ख़ाली; 8. चमत्कार

निगाहो दिल के पास हो, वो मेरा आशना[1] रहे
हवस है या कि इश्क़ है, ये कौन सोचता रहे

वो मेरा जब न हो सका तो फिर यही सज़ा रहे
किसी को प्यार जब करूँ, वो छुप के देखता रहे

मना तो उसको लूँ मगर ये सिलसिला भी क्या रहे
अलग है इसका ज़ायक़ा[2] कि वो खिंचा-खिंचा रहे

मशामे-जाँ[3] इ ख़ुश्बूओं की जब फुवार ही न हो
हज़ार बात बात में वो फूल टाँकता रहे

शगुफ़्तने-जमाल[4] को हिजाबे-लम्स[5] चाहिए
फ़सीले-शब[6] की ओट में चराग़ ये जला रहे

न उतनी दूर जाइए कि लोग पूछने लगें
किसी को दिल की क्या ख़बर ये हाथ तो मिला रहे

---

1. दोस्त; 2. स्वाद; 3. दिमाग़; 4. सुन्दरता का खिलना; 5. स्पर्श का पर्दा; 6. रात की शहर-पनाह (चारदीवारी)

फ़सूने-हर्फ़[1] ले गया, तिलस्मे-ख़्वाब[2] ले गया
वरक़ वरक़ उसी का था वही किताब ले गया

अभी निगह झुकी न थी कि मैंने होंठ रख दिए
सवाल वो न कर सका, मगर जवाब ले गया

मुझे पता था राह में चराग़ जल न पाएगा
वहाँ गया तो अपने साथ माहताब ले गया

फ़रोग़े-जिस्मे-ताज़ा[3] से, खुमारे-रंगे-ग़ाज़ा[4] से
नशा बहुत बढ़ा गया मगर शराब ले गया

मिरी अज़ल[5] की तिश्नगी[6] बुझा गया वो नर्म दिल
निशाते-आब[7] दे गया, ग़मे-सराब[8] ले गया

था देखने में सादा-रु[9] मगर बड़ा ज़हीन[10] था
मुझे गुनाहगार करके वो सवाब[11] ले गया

लुटा गया वो गुलबदन[12] चमन के सारे ज़ायक़े[13]
यहाँ वो ख़ार[14] दे गया, वहाँ गुलाब ले गया

---

1. शब्दों का जादू; 2. सपनों का इन्द्रजाल; 3. नौजवान वदन की चमक; 4. मुख-चूर्ण के रंग की मस्ती; 5. सृष्टिकाल; 6. प्यास; 7. शराव का आनन्द; 8. मृगजल का दुःख; 9. मामूली सूरत वाला; 10. समझदार; 11. पुण्य; 12. फूल जैसे वदन वाला; 13. स्वाद; 14. काँटा

न जाने दिल पे क्या गुज़री, मगर बाहर नहीं बदला
तुम्हारे बाद भी इस शहर का मंज़र नहीं बदला

बदलते मंज़रो! ख़ुश हो के पस-मंज़र[1] तो बाक़ी है
अभी पर्दा ही बदला है अभी वो दर नहीं बदला

रुतों के साथ दिलदारी की रंगत भी बदलती है
वो हर मौसम से गुज़रा है, मगर अक्सर नहीं बदला

मिरे सब ख़्वाब तारों की तरह टूटे मगर उसका
गुलों की ओस में भीगा हुआ पैकर[2] नहीं बदला

वो अब भी चैन से आराम ही की नींद सोता है
वो मेरे रतजगों के पास भी आकर नहीं बदला

---

1. पीछे का दृश्य, 2. आकृति

मैं अक्स[1] अक्स रंगे बहाराँ में खो गया
ये हादसा अजीब है, होना था हो गया

लम्हाते-बे-बसर[2] के तआक़ुब[3] में वो गया
ख़मदार[4] सीढ़ियों का अँधेरा था, खो गया

जलती हुई सड़क पे अकेला रहा सफ़र
जब बर्फ़ गिर रही थी तिरा साथ हो गया

अब देखिए कि फ़स्ल हो किस के नसीब में
मैं तुख़्मे-ख़्वाब[5] रात की खेती में बो गया

मैं साहिले मुराद पे था तेरा मुंतज़िर
लहरों का ज़ोर दिल का सफ़ीना[6] डुबो गया

जागा रहा जो बिस्तरे शब पर तमाम उम्र
वो कौन था जो आज सरे सुब्ह सो गया

आया था वो बहार का मौसम गुज़ारने
अपने लहू में अपना सरापा भिगो गया

उठो, कि अब तो सुबह हुए देर हो गई
वो दास्ताने दर्द सुनाकर, सुनो, गया

---

1. साया; 2. अंधे क्षण; 3. पीछा करना; 4. टेढ़ी मेढ़ी; 5. सपनों के बीज; 6. कश्ती

तुझे भी जाँचते, अपना भी इम्तहाँ करते
कहीं चराग़ जलाते कहीं धुआँ करते

कई थे जलवए-कमयाब[1] तुझ से पहले भी
किस आसरे पे तिरा नक़्श जादवाँ[2] करते

सफ़ीना डूब रहा था तू क्यों न याद आया
तिरी तलब, तिरे अरमाँ को बादबाँ[3] करते

मुहब्बतें भी तिरी हैं, शिकायतें भी तिरी
यक़ीन तुझ पे न होता तो क्यों गुमाँ करते

हवा थी तेज़, जलाते रहे दिलों में चराग़
कटी है उम्र लहू अपना राइगाँ[4] करते

वो बेजहत[5] का सफ़र था, सवादे[6] शाम न सुबह
कहाँ पे रुकते, कहाँ यादे-रफ़्तगाँ[7] करते

हिसारे ख़्वाब[8] में बैठे, गुलों के घर में रहे
मगर ये ग़म ही रहा, ख़ुद को शादमाँ करते

---

1. अधिक सुन्दर चेहरे; 2. नित्य, सदा रहने वाला; 3. मरुत्पट, पाल; 4. व्यर्थ; 5. दिशा; 6. किसी नगर या आवादी की सीमा की शुरुआत; 7. मरने वालों की याद; 8. सपनों का घेरा (चारदीवारी)

ख़्वाहिशे सूद[1] नहीं है तो ज़याँ[2] भी कम है
रौशनी कम है तो शम्ओं में धुआँ भी कम है

ऐसा लगता है कि आँसू भी हैं थमने वाले
दिल से आती हुई आवाज़े फ़ग़ाँ भी कम है

अपने जो ख़्वाब हैं, सब उसपे निछावर कर दें
वो तकल्लुफ़[3] भी नहीं, इज्ज़े-बयाँ[4] भी कम है

चूम लें ज़ीना-ए-ख़लवत[5] पे उसे आज की शाम
ख़ौफ़े-दिल ही नहीं, अंदेशा-ए-जाँ[6] भी कम है

बैठें कुछ देर तिरी सुर्मइ यादों के तले
शुक्र है आज ज़रा कारे-जहाँ[7] भी कम है

यूँ है सरशार तिरे हिज्र की लज़्ज़त से ख़याल
शौक़े-मय भी, हवसे-लाला-रुख़ाँ[8] भी कम है

तुझको पाने के लिए उसको भुलाने के लिए
अर्ज़े कश्मीर की वादीए-जनाँ[9] भी कम है

---

1. नफ़ा, फ़ायदा; 2. नुक़सान; 3. संकोच; 4. अल्प अभिव्यक्ति; 5. एकान्त की सीढ़ी;
6. जान का ख़तरा; 7. दुनिया के काम; 8. हसीनों का लोभ; 9. जन्नत जैसी घाटी

उससे न जब मिले तो ज़माने से कब मिले
जो लोग भी मिले वो उसी के सबब मिले

बस मैं : शिकस्त-व-फ़तह मिरा मसअला न था
यूँ तो इसी महाज़[1] पे जितने थे सब मिले

मेरी गुज़ारिशों से तो होगा ही नर्म दिल
लेकिन मज़ा तो जब है कि वो बे तलब मिले

उसका ही एक रंग सभों से जुदा न था
इस रास्ते में सारे मनाज़िर अजब मिले

कल वो मिला था दश्त[2] में यूँ मुझ से टूट कर
जैसे हवाए दर्द से शाख़े तरब[3] मिले

लेकिन वो फ़ासला जो अना[4] से अना में था
यूँ तो बदन बदन से मिला, लब से लब मिले

हम थे कि आँसुओं के सफ़र पर रवाँ रहे
वर्ना बहुत से ग़म हमें साग़र-बलव[5] मिले

मैं बादशाहे सलतनते ख़्वाब हूँ इमाम
मुझ से कनीज़े ग़म जो मिले, बा अदब मिले

---

1. युद्ध-केन्द्र; 2. जंगल; 3. हर्ष, आनन्द; 4. अभिमान; 5. होंठों से शराब का प्याला लगाए हुए

चाँद शाख़ों की मीना[1] से ढलता हुआ
दर्द बच्चे की सूरत मचलता हुआ

याद की बेल आँखों पे चढ़ती हुई
बर्गे-ताज़ा[2] गुलाबों में पलता हुआ

आतशे-जिस्म[3] पर बाग़ खिलते हुए
एक घर तेज़ बारिश में जलता हुआ

रात की शाहज़ादी बहकती हुई
गुंनचए-सुब्ह[4] आँखों को मलता हुआ

सख़्त होते हुए आबशारों[5] के लब
बर्फ़ की तरह मौसम पिघलता हुआ

सर पे तलवार लटकी हुई शाम की
और मग़रिब[6] से सूरज निकलता हुआ

काफ़ले शहरो सहरा भटकते हुए
इक सितारा सरे राह जलता हुआ

एक आँधी मकानों में पलती हुई
इक परिन्दा फ़ज़ा में सँभलता हुआ

---

1. शराव की वोतल; 2. नया पत्ता; 3. वदन की आग; 4. प्रभात की कली; 5. झरना; 6. पच्छिम

मज़ा लम्स[1] का बेज़बानी में था
अजब ज़ायक़ा खुशगुमानी[2] में था

मिरी वुस्अतों[3] को कहाँ जानता
वो महव[4] अपनी ही बेकरानी[5] में था

मिटाते रहे अव्वलीं याद को
कि जो नक़्श था नक़्शे सानी में था

बहुत देर तक लोग साहिल पे थे
सफ़ीना मिरा जब रवानी में था

हमीं से न आदाब बरते गए
सलीक़ा बहुत मेज़बानी में था

मए-कुहना[6] में था नशा दर नशा
मगर जो मज़ा ताज़ा पानी में था

हमें वो हमीं से जुदा कर गया
बड़ा ज़ुल्म उस मेहरबानी में था

सफ़र में अचानक सभी रुक गए
अजब मोड़ अपनी कहानी में था

---

1. स्पर्श; 2. भ्रम; 3. विस्तार; 4. मग्न; 5. फैलाव; 6. पुरानी शराब

तारों से भरी राहगुज़र ले के गई है
ये सुबह चराग़ों का नगर ले के गई है

तुमको तो पता होगा कि हमराह तुम्हीं थे
दुनिया मिरे ख़्वाबों को किधर ले के गई है

प्यासे थे तो पानी को पुकारा था हमीं ने
नद्दी इधर आई है तो घर ले के गई है

इक मंज़िले बेमक़सदो बेनाम की ख़्वाहिश
काँटों की सवारी पे सफ़र ले के गई है

बे बालो परी अब भी सरे दश्त है महफ़ूज
आँधी तो फ़क़त बर्गो-समर[1] ले के गई है

शायद कि अब आए तिरी क़ुर्बत की नई फ़स्ल
इस बार दुआ दस्ते असर ले के गई है

चमकेगा अभी ज़ेवरे शहज़ादीए महताब
उस तक वो मिरे शब की ख़बर ले के गई है

---

1. पत्ते और फल

कोई बेचैन अदा रहने दो
बादबानों को खुला रहने दो

वक़्त रुकता हुआ महसूस न हो
कोई हंगामा बपा रहने दो

घर में बाहर की हवा भी आए
ग़म का दरवाज़ा खुला रहने दो

मेरी आँखों में लहू रंग हैं अश्क[1]
उस हथेली पे हिना[2] रहने दो

बेकराँ दश्त, परिन्दे लरज़ाँ[3]
दूर की कोई सदा रहने दो

क्या पता कब कोई रस्ता भूले
अपनी चौखट पे दिया रहने दो

ख़्वाब ज़िन्दा तो हैं आँखों में अभी
डूबती शब की ज़या[4] रहने दो

आख़िरी पल भी ग़नीमत है बहुत
आप आ जाओ, दुआ रहने दो

मैंने जब हाले तमन्ना पूछा
दिल ने चुपके से कहा, रहने दो

ज़ख़्म किस किसको दिखाओगे इमाम
जिस्म पर शोख़ क़बा[5] रहने दो

---

1. आँसू; 2. मेंहदी; 3. काँपते हुए; 4. रोशनी; 5. लिबास

वो अपने ग़म से ही छूटा न होगा
कभी उसने मुझे सोचा न होगा

हमें मंज़िल ब मंज़िल जागना है
पलक झपकी तो फिर रस्ता न होगा

ये पहली बर्फ़ है आँखों में भर लो
ये मौसम फिर कभी उजला न होगा

ये पहला लम्स[1] होगा, लम्से आख़िर
ज़माने आयेंगे, लम्हा न होगा

कोई इक शाम तो ऐसी भी होगी
वो आजाएगा जब वादा न होगा

जुदा आगे भी होगा बारहा वो
ये मंज़र इस क़दर फीका न होगा

मिज़ाजन वो न इतना बेवफ़ा था
हमीं ने उस तरह चाहा न होगा

न रुकता वो मगर ठिठका तो होता
यक़ीनन उसने पहचाना न होगा

हमेशा ख़ुशगुमाँ रक्खा है दिल ने
ये आईना कभी सच्चा न होगा

---

1. स्पर्श

बे आब[1] आईने थे शजर[2] बे लिबास थे
दुनिया बहुत उदास थी, जब हम उदास थे

इक ख़ुश-अदा[3] के क़ुर्ब से रौशन थीं लफ़्ज़ें
लेकिन वो वसवसे जो मिरे आस पास थे

ये राहे-ख़ारो-संग[4] मिरा इंतिख़ाब[5] थी
जो मरहले भी आए, वो हस्बे-क़यास[6] थे

दुनिया थी आँसुओं में नहाई हुई किताब
भीगे हुए वरक़ का हम इक इक़तबास[7] थे

---

1. चमक; 2. पेड़; 3. अच्छे व्यवहार वाली प्रेमिका; 4. काँटों और पत्थरों से भरा हुआ रास्ता; 5. पसन्द; 6. अनुमान के अनुसार; 7. उद्धरण

हर एक शख़्स का चेहरा उदास लगता है
ये शहर मेरा तबीयत शनास लगता है

खिला हो बाग़ में जैसे कोई सफ़ेद गुलाब
वो सादा-रंग, निगाहों को ख़ास लगता है

सुपुर्दगी का नशा भी अजीब नश्शा है
वो सर से पाँव तलक इल्तमास[1] लगता है

हवा में खुश्बुए मौसम कहीं सिवा[2] तो नहीं
वो पास है, ये बईद अज़ क़यास[3] लगता है

---

1. अनुरोध; 2. ज़्यादा, अधिक; 3. अनुमान से दूर

बे मिन्नते[1] चराग़, ज़रा दूर तक चलें
लेकर दिलों के दाग़, ज़रा दूर तक चलें

सहराए इंतज़ार के गुम-करदा-राह[2] का
ढूँढ़ें कोई सुराग़, ज़रा दूर तक चलें

शायद इसी तरह से मिले, हम सफ़ीर[3] के
एहसान से फ़राग़[4], ज़रा दूर तक चलें

ऐ रश्के सद गुलाब! हैं कब से खिले हुए
तन्हाइयों के बाग़, ज़रा दूर तक चलें

अन्धी मसाफ़तों ने किया है शिकस्ता-पा[5]
ऐ दिल के शब चराग़! ज़रा दूर तक चलें

---

1. एहसान, उपकार; 2. रास्ता भूला हुआ; 3. हमज़बान; 4. निजात; 5. टूटे पाँव वाला

दिलों के रंग अजब, राबता[1] है कितनी देर
वो आशना है मगर आशना है कितनी देर

नई हवा है, करें मशअले हवस रौशन
कि शम्ए दर्द, चराग़े वफ़ा है कितनी देर

अब आरज़ू को तिरी, बेसदा भी होना है
तिरे फ़क़ीर[2] के लब पर दुआ है कितनी देर

अब इसको सोचते हैं और हँसते जाते हैं
कि तेरे ग़म से तअल्लुक़ रहा है कितनी देर!

है ख़ुश्क चश्मा-ए-सहरा,[3] मरीज़ वादी व कोह
निगार ख़ाना-ए-आबो हवा है कितनी देर

ठिठुरते फूल पे तस्वीरे रंग व बू कब तक
झुलसती शाख़ पे बर्गे हिना है कितनी देर

---

1. मेल जोल; 2. माँगने वाला यानी आशिक़; 3. सूखा हुआ

मौसम के बदलने का कुछ अंदाज़ा भी होता
जब घर ही बनाया था तो दरवाज़ा भी होता

हम शेरे-नमक-रेज़[1] सुनाते सरे महफ़िल
जो ज़ख़्म फ़सुर्दा[2] था, तरोताज़ा भी होता

तुम होते तो मेराजे[3] ख़यालात भी होती
बिखरे हुए अल्फ़ाज़ का शीराज़ा[4] भी होता

जज़्बात की आँखों में चमकता कोई शोला
एहसास के रुख़्सार पे कुछ ग़ाज़ा भी होता

रक़्क़ासए-दीरोज़[5] भी बे-पैरहन[6] आती
दोशीज़ए-इम्कान[7] का ख़मियाज़ा[8] भी होता

---

1. नमक छिड़कने वाले; 2. सूखा हुआ; 3. सोपान; 4. क्रम; 5. अतीत की नर्तकी; 6. वेलिवास; 7. संभावना की कुमारी; 8. अँगड़ाई

ये सराबे-जिस्म-व-जाँ[1] ही तो उठा ले जाएगी
ज़िन्दगी मुझसे ख़फ़ा होगी तो क्या ले जाएगी

भूल जाएँगे तुझे इक रोज़ तेरे ग़म गुसार
वक़्त की आँधी तिरा ग़म भी उड़ा ले जाएगी

क्या पता था एक दिन तस्वीर बन जाएँगे हम
ख़ामुशी चुपके से आएगी, सदा ले जाएगी

आज भी जलते हैं आँखों में तसव्वुर के दिये
तुम तो कहते थे कि सब अंधी हवा ले जाएगी!

---

1. शरीर और आत्मा की मरीचिका

तुमने शबे-हिज्राँ[1] की मुझको जो दुआ दी है
मैंने भी चराग़ों की लौ और बढ़ा दी है

शबनम हो, कि मोती हो, तारा हो कि आँसू हो
मैंने तिरे रस्ते में हर चीज़ सजा दी है

ज़िन्दाने[2] जुदाई में ख़ुश्बू की सदा आए
मैंने तिरी यादों की ज़ंजीर हिला दी है

कश्मीर की ग़ज़लों पर एहसान उसी का है
लफ़्ज़ों को क़बा दी है, होंठों को नवा दी है

---

1. वियोग (जुदाई) की रात; 2. क़ैदख़ाना

उसे हाल से बाख़बर कीजिए
मगर ख़ुद को भी मोतबर[1] कीजिए

कई ज़लज़ले आज आने को हैं
तमाशाए ज़ेरो-ज़बर[2] कीजिए

हिना[3] अब दरख़्तों पे उगती नहीं
मिरे ख़ून में हाथ तर कीजिए

बहुत दूर तक रेत ही रेत है
ज़रा दावते चश्मे-तर[4] कीजिए

कभी तो नदामत[5] का एहसास हो
तक़ाज़ा सरे-रहगुज़र[6] कीजिए

कहीं भी उतर जाइए राह में
सफ़र को बहुत मुख़्तसर कीजिए

जुदाई के दिन हैं, ग़ज़ल ही सही
यही एक कारे-हुनर[7] कीजिए

---

1. विश्वासपात्र; 2. अस्त-व्यस्त, तले ऊपर; 3. मेंहदी; 4. आँसुओं से भीगी आँख; 5. लज्जा, शर्मिंदगी; 6. रास्ते में; 7. गुण का काम

ज़लज़ले सब दिल के अन्दर हो गए
हादसे रोमान-परवर हो गए

कश्तियों की क़ीमतें बढ़ने लगीं
जितने सहरा थे, समन्दर हो गए

धूप में पहले पिघल जाते थे लोग
अबके, क्या गुज़री, कि पत्थर हो गए

वो निगाहें क्या फिरीं हमसे, कि हम
अपनी ही आँखों में कमतर हो गए

तुम, कि हर दिल में तुम्हारा घर हुआ
हम—कि अपने घर में बेघर हो गए

हर खरा इस कसौटी पे खोटा हुआ
ताक़ पर रह गया अपना परखा हुआ

किस सलीक़े से मुहरें लगाई गईं
लब जो खोले किसी ने अचम्भा हुआ

ख़ून बोए गए जिस्म काटे गए
बस यही काम का एक सौदा हुआ

सुर्ख़ मख़मल की झालर लटकती रही
वामो दीवार का रंग पीला हुआ

साहिले सुब्ह पर कश्तीए नूर थी
बादबाँ खुल गए तो अँधेरा हुआ

वक़्त किस किसके ज़ख़्मों का मरहम बने
ख़ुद है अपने मसाइल में उलझा हुआ

तौल मुझको, मुझे मीज़ान[1] में रख
मैं अलामत[2] हूँ मुझे ध्यान में रख

तुन्द[3] होती हुई हर लहज़ा[4] हवा
उसको भी अपने ही एहसान में रख

शहर और गाँव को शोलों से सजा
मौसमे-गुल को बयाबान में रख

तेरी हर जुंबिशे-अबरु[5] पे निसार
अपनी तलवार को अब मयान में रख

मंज़िले आख़िरे शोहरत पे न जा
अपने आग़ाज़ को भी ध्यान में रख

धूप को कमरे की मसनद पे बिठा
शाम को चुपके से दालान में रख

सिर्फ़ तादाद न दीवाँ की बढ़ा
चन्द अशआर भी दीवान में रख

---

1. तराज़ू; 2. प्रतीक; 3. तीव्र, तेज़; 4. क्षण; 5. भौंह की कम्पन

फिर शहर में आए हैं सितमगर, तो हमें क्या
सड़कों पे हैं सन्नाटों के लश्कर, तो हमें क्या

हमने तो दरीचों पे सजा रखे हैं परदे
बाहर है क़यामत का जो मंज़र, तो हमें क्या

खुश्बू में मुक़य्यद[1] हैं, हमारे गुल व लाला
खुलता है कहीं ज़ख़्म का दफ़्तर, तो हमें क्या

हमने तो कभी जुराअते परवाज़ नहीं की
तोड़े गए यारों के जो शहपर[2] तो हमें क्या

दीवारो दरो बाम हमारे हैं मुनक़्क़श[3]
शहरी हुए इस शहर के बेघर तो हमें क्या

बनते नहीं ये लोग भी क्यों शह के मुसाहिब
डसते हैं उन्हें जब्र के अजगर, तो हमें क्या

---

1. क़ैद; 2. परिन्दे के बाज़ू का सबसे बड़ा पर; 3. चित्रित

शुक्रिया तेरा, कि ग़म का हौसला रहने दिया
बेअसर कर दी दुआ, दस्ते-दुआ रहने दिया

पाँव सबके तोड़ डाले, क़ाफ़िला रहने दिया
मंज़िलें नापैद कर दीं, रास्ता रहने दिया

मुंसिफ़ी[1] का शोरे-महशर[2] गूँजता रहने दिया
सब दलीलों को सुना और फ़ैसला रहने दिया

ऐ ख़ुदा ममनून[3] हूँ तेरा कि मेरे फूल में
तूने ख़ुश्बूए हवस, रंगे वफ़ा रहने दिया

कुछ इशारे—इतने मुबहम[4], इतने वाज़ेह[5], इतने शोख़
दास्ताँ सारी सुना दी, मुद्दआ रहने दिया

एक नाज़े-बेतकल्लुफ़[6] मेरे तेरे दरमियाँ
दूरियाँ सारी मिटा दीं, फ़ासला रहने दिया

---

1. इन्साफ़; 2. क़यामत जैसा शोर; 3. आभारी; 4. अस्पष्ट; 5. स्पष्ट; 6. निस्संकोच इतराहट

ज़ख़्मे ताज़ा क्या दिखाऊँ जब मसीहाई[1] न हो
उसके घर जाऊँ तो पहली सी पज़ीराई[2] न हो

राइगाँ[3] सारा सफ़र, सब कोह-पैमाई[4] न हो
मेरे जज़्बे[5] की तरह गहरी कहीं खाई न हो

जुर्मे-नौ आयद[6] न हो, इक ताज़ा रुस्वाई न हो
देख लूँ, दुनिया कहीं मेरे क़रीब आई न हो

ये सज़ा क्या है कि जलने के लिए शोले न हों
डूबना चाहूँ तो दरियाओं में गहराई न हो

मैंने अक्सर फ़ातेहों[7] के डूबते देखे हैं दिल
ऐ ख़ुदा! मैं हार भी जाऊँ तो पसपाई[8] न हो

---

1. इलाज; 2. आवभगत; 3. व्यर्थ; 4. पहाड़ों पर चढ़ना; 5. मनोभाव; 6. नया आरोप लगना; 7. विजेताओं; 8. पीछे हटना

वो मेहमान मिरा, मेज़बान[1] किसका है
अगर वो सच है मिरा, फिर गुमान किसका है

हम ऐसे ध्यान में गुम थे कि ध्यान ही न रहा
ये पूछती रही दुनिया कि ध्यान किसका है

खड़ा हुआ हूँ यहाँ एक पाँव पर कब से
ये साएबान मिरा है मकान किसका है

सुना है ये कि यहाँ था तिलिस्म-ख़ानए-रंग[2]
ज़मीं पे मिटता हुआ-सा निशान किसका है

रफ़ीक़े-मौजे-बला[3]! अब हवा से बचना क्या
सफ़ीना तेज़ सही, बादबाँ किसका है

वो मीरे-वक़्त नहीं, ग़ालिबे-ज़माना नहीं
तिरा इमाम मगर हम ज़बान किसका है

---

1. मेहमानदार; 2. रंगों का जादुई घर; 3. मुश्किलों की लहरों में (हाथ-पाँव मारने वाले) साथी

पसे-ग़ुबारे-तलब[1], रात ढलती रहती है
नशे में चूर, पिघलती, मचलती रहती है

ख़बर यही है कि आग़ोशे हिज्र में पहरों
तुम्हारी याद भी पहलू बदलती रहती है

ये मैंने देखा है अक्सर फटी-पुरानी हयात
सरे-दरीचए-शब[2] हाथ मलती रहती है

क़फ़स[3] से हम भी निकलने को कब से हैं बेताब
मगर वो साअते-आख़िर[4] जो टलती रहती है

वो रंग, रंगे बहाराँ है, खिलता रहता है
वो शाख़, शाख़े समरवर[5] है, फलती रहती है

है एक कारे-ज़याँ[6] शहर शहर दरबदरी
मगर यही कि तबीअत बहलती रहती है

---

1. ख़्याहिश के गर्द-व-गुबार के पीछे; 2. रात की खिड़की पर; 3. पिंजरा (ज़िन्दगी का क़ैदख़ाना); 4. आख़िरी समय; 5. फलदार डाल; 6. व्यर्थ काम

ज़िन्दगी भूल गई अपना पता, लौट चलें
जिसको आना था वो आने से रहा, लौट चलें

दिल-गिरफ़्ता[1] है बहुत शब की सदा, लौट चलें
दूर तक—नामे ख़ुदा, नामे ख़ुदा, लौट चलें

हम नए हों कि न हों, इतने पुराने भी नहीं
अजनबीयत का करें किससे गिला[2], लौट चलें

शब की दहलीज़ पे चमकी न किसी पाँव की चाप
रौज़ने[3] सुब्ह भी खोले न खुला लौट चलें

अब इसे फ़तह[4] कहें या कि शिकस्त[5], इतना है
खेल सब ख़त्म हुआ, ख़त्म हुआ, लौट चलें

कल तो दुनिया की निगाहें भी बहुत तेज़ न थीं
जाने क्या सोच के उसने ये कहा : लौट चलें

---

1. दुखी; 2. शिकायत; 3. खिड़की; 4. जीत; 5. हार

हाथ उठते ही कटा, चलिए, यहाँ से चलिए
क्या दुआ, कैसी दुआ, चलिए, यहाँ से चलिए

बाज़[1] है कोई दरीचा, न कोई दर है खुला
कोई जलवा न अदा, चलिए, यहाँ से चलिए

उसके घर पर भी वही शहरे-ख़मोशाँ[2] का समाँ
कोई आहत न सदा, चलिए, यहाँ से चलिए

ख़्वाब, ख़ुश्बूए तलब, रंगे हवस, नाज़े वफ़ा
सारा सरमाया[3] गया, चलिए, यहाँ से चलिए

कोई साया न शजर, कोई तमन्ना न उमंग
उड़ गई सर से रिदा[4], चलिए यहाँ से चलिए

अब तो दुनिया है, न दीं[5], कोई अक़ीदा[6] न यक़ीं
कोई अच्छा न बुरा, चलिए, यहाँ से चलिए

इस चकाचौंध में सिक्कों की परख क्या होगी
कोई खोटा न खरा, चलिए यहाँ से चलिए

ख़ुद को किस तरह बचाएँ कि बहुत देर से है
ताक में ख़ल्क़े-ख़ुदा, चलिए, यहाँ से चलिए

दोस्तों ही के क़बीले में ये कुहराम नहीं
दुश्मनों ने भी कहा, चलिए यहाँ से चलिए

---

1. खुला; 2. क़ब्रिस्तान; 3. पूँजी; 4. चादर; 5. धर्म; 6. विश्वास; 7. ख़ुदा के बनाए हुए लोग

आज़ाद ग़ज़ल

तू जो माएल-ब-करम[1] था,
तो ज़माने का मुझे होश नहीं रहता था
मैं, कि ख़ुदसर था, तिरे ज़ेरे-नगीं[2] रहता था

शाख़-दर-शाख़ गुलाबों की धनक फूटी है
इक परिन्दा था, यहीं रहता था

दिल से बेसाख़्ता बहते हुए आँसू का सफ़र
आँख की मंज़िल से परे ख़त्म हुआ
कौन वीरान मकाँ देख के पूछे कि :
यहाँ कोई मकीं रहता था?

ख़ाक उड़ती हुई देखी तो दिलों की याद आई
क्या यहाँ कोई हसीं रहता था!

रात आँखों में हया ले के गुज़र जाती थी
लम्हए शौक़ बहुत चीं ब जबीं रहता था

दूर से देख रहा हूँ मैं झुलस्ती हुई बस्ती का धुआँ
वो उसी जलते हुए, गाँव का बासी था, वहीं रहता था

---

1. मेहरवान; 2. मातेहत, ग़ुलामी में

इसी सुर्मई रौशनी में रवाँ दिल का हारा हुआ कारवाँ है
चराग़े सहर में धुआँ ही धुआँ है

मिली है जो मंज़िल, तो ये लग रहा है कि सारा सफ़र राइगाँ[1] है
कि अब साँस का बोझ ढोना भी जी का ज़ियाँ[2] है

मकीं हैं नए, उनकी क़दरें[3] नई हैं
सितम-आज़मूदा गली[4] में अभी तक हमारा पुराना मकाँ है!

जिसे ढूँढ़ता हूँ, वो मेरे ही दिल के दरीचे से लग कर खड़ा है
जिसे पा चुका हूँ, कहाँ है!

वही नक़्शे अव्वल[5], वही नक़्शे सानी[6]
वही नक़्शे जाँ है

जो थे अपने गुफ़्तार[7] की गुलफ़शानी[8] पे नाज़ाँ[9],
वो अपनी ज़बाँ काटते हैं
किया है मुझे जिसने सरशारे-याक़ूते-लब[10], मेरा इज्ज़े-बयाँ[11] है

मिरी आँख का ज़ाबिया[12] मेरी फ़िक्रो नज़र को
अभी दायरों में समेटे हुए है
नशिस्त अपनी बदलूँ तो देखूँ : मिरे शौक़े-आख़िर[13] की सरहद
कहाँ है!

---

1. व्यर्थ; 2. हानि; 3. मूल्य; 4. जिस पर अत्याचार हुआ हो; 5. पहला; 6. दूसरा; 7. बातचीत; 8. फूल झाड़ना; 9. अहंकारी, मग़रूर; 10. होंठों की पुलक से मस्त; 11. अल्प अभिव्यक्ति; 12. दृष्टिकोण; 13. आख़िरी तमन्ना

सब दुआएँ हो चुकीं, अंजामे दरमाँ[1] हो चुका
ऐ चराग़े-बे-सहर मेरे लिए इक लम्हए आख़िर[2] तो ला

गूँजती है रेत पर अब भी सदाए-नक़्शे-पा[3]
कौन था वो ऐ समन्दर की हवा!

मैं, कि अपनी बे-अमाँ[3] रातों का हूँ परवरदिगार[4]
आ तुझे भी आज़मा लूँ ऐ खुदा!

अपने अन्दर अब कोई शोला उबल पड़ने को है
ऐ मुसव्विर[5]! शब के पस-मंज़र[6] में कोई आतिशीं[7] मंज़र दिखा

ऐ मिरी महबूब मिट्टी! मेरे क़दमों को तक़द्दुस[8] बख़्श दे
पाँव में छाले लिए तुझ तक मैं वापस आ गया

□□

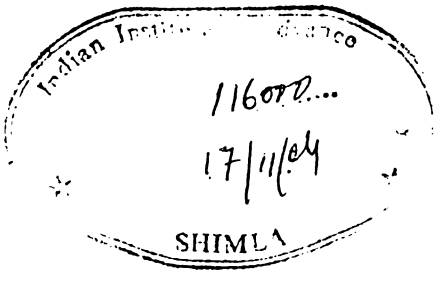

1. इलाज; 2. अन्तिम क्षण; 3. पाँव के निशानों की आवाज़; 3. सुरक्षा-हीन; 4. ईश्वर, पालनहार; 5. चित्रकार; 6. पृष्ठभूमि; 7. अग्निमय; 8. पवित्रता

कब धनक सो गई कब सितारे बुझे
कोई कब सोचता है तिरे शहर में!

कोई ख़ुश्बू की झंकार सुनता नहीं
कौन-सा गुल खिला है तिरे शहर में!

हिना अब दरख़्तों पे उगती नहीं,
मिरे ख़ून में हाथ तर कीजिए

कश्तियों की क़ीमतें बढ़ने लगीं,
जितने सहरा थे समन्दर हो गए

माना की धनक बनकर अल्फ़ाज़ में ढल जाओ
तुम मोम हो या शोला, जो कुछ हो, पिघल जाओ

वर्ष 1996 के लिए उर्दू की श्रेष्ठ रचना के नाते साहित्य अकादेमी से इनामयाफ़्ता कविता-संकलन **पिछले मौसम का फूल** का हिन्दी में लिप्यंतरण खुद जनाब **मज़हर इमाम** ने किया है। मज़हर इमाम ने जिन बहरों का इंतिख़ाब किया है, वे बड़ी लयात्मक और ताज़गी-भरी हैं। आप काव्य पर अपनी निपुणता ज़ाहिर करने के लिए बाज़ शायरों या कवियों की तरह अपरिचित छंदों में शेर नहीं कहते। आपकी रदीफ़ें ज़ाहिर करती हैं कि वो मिसरा तरह पर नहीं लिखी गई, बल्कि आपके ज़ज़्बात के मोड़ और तजर्वात के बहाव का प्रमाण हैं। आप में कश्मीर के हुस्न और दिलनवाज़ मौसम के असरात भी मिलते हैं, मगर आपकी प्रकृति से ज़्यादा इंसान से दिलचस्पी है।

वो पुल कहाँ है, जो दुनिया से जोड़ता था मुझे
जो तू क़रीब हो, सबसे क़रीब आऊँ मैं

उत्तरप्रदेश उर्दू अकादमी पुरस्कार, जम्मू एण्ड कश्मीर अकादेमी सांस्कृतिक पुरस्कार, बिहार उर्दू अकादेमी पुरस्कार, पश्चिम बंग उर्दू अकादेमी पुरस्कार, क्रिटिक सर्कल आव इण्डिया पुरस्कार, नजमी पुरस्कार तथा मीर अकादमी पुरस्कार से नवाज़े गये **मज़हर इमाम** का जन्म 1930 में बिहार के दरभंगा ज़िले में हुआ था। आप उर्दू और फ़ारसी के विद्वान हैं और तीस वर्षों तक आकाशवाणी और दूरदर्शन में काम करते हुए आपने 1988 में श्रीनगर दूरदर्शन में केन्द्र निदेशक के रूप में अवकाश ग्रहण किया।

Library
IIAS, Shimla
H 819.100 8 M 457 P
00116000

ISBN-81-260-0399-5
मूल्य : 45 रुपये